एकात्म मानव दर्शन तथा अन्त्योदय

आदेश सिंह

एम.एड. द्वितीय वर्ष, शिक्षा विभाग, छत्रपति शाहूजी महाराज वि.वि., कानपुर

भारत में 'एकात्म मानववाद' ने पश्चिमी विचार दर्शन सम्बन्धी व्यवस्थाओं की अपूर्णता एकांगीपन असन्तुलन और व्यर्थता को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया है। एकात्मवादी इस व्यवस्था ने हमें ऐसे विश्व राज्य के उदय की संभावना से अवगत करा दिया है जिसमें सभी देशों की राष्ट्रीय संस्कृतियां अपना–अपना विकास करते हुये मानवता को समृद्ध बनाने में सहायक हो सकेगी और तब ऐसे मानव धर्म का विकास किया जा सकेगा जिसमें भौतिकता सहित संसार में सभी मजहब पंथ या रिलीजन अपनी पूर्णता के साथ अपना योगदान कर सकेंगे।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय महान चितंक और संगठनकर्ता थे। उन्होंने भारत की सनातन विचारधारा को युगानुकूल में रूप में प्रस्तुत करते हुए देश को एकात्म मानववाद जैसी प्रगतिशील विचारधारा दी एकात्म मानववाद मानव जीवन व सम्पूर्ण सृष्टि के एक मात्र सम्बन्ध का दर्शन है इसका वैज्ञानिक विवेचन पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने किया था एकात्म मानववाद, राष्ट्रीय स्वयं सेवक का मार्गदर्शक दर्शन है। यह दर्शन पड़ित दीनदयाल उपाध्याय द्वारा 22 से 25 अप्रैल 1965 को मुम्बई में एक सभा में रखा गया। भारतीय जनसंघ के इतिहास में यह ऐतिहासिक घटना 1965 के विजयवाड़ा अधिवेशन में हुई। इस अधिवेशन उपस्थिति सभी प्रतिनिधियों ने करतल ध्वनि से एकात्म मानव दर्शन को स्वीकार किया। पंडित दीनदयाल जी व्यक्तिवाद, लोकतंत्र, समाजवाद, साम्यवाद और पूंजीवाद को पश्चिमी अवधारणा मानते थे, वह इनको भौतिक विचारधाराओं का स्वरूप मानते थे। पंडित दीनदयाल जी ने एकात्म मानवाद को सम्पूर्ण सृष्टि का एक मात्र दर्शन बताते हुए मानवशांति, राजनीतिज्ञ, सामाजिक और अर्थनीति के जिन सिद्वान्तों को जनता के सामने रखा वह अतुलनीय व अद्भुत है। वास्तव में पंडित दीनदयाल जी ने जो चिन्तन दिया वह मनुष्य का समग्र चिन्तन था और उन्होने मनुष्यता को वैश्विक चेतना का आधार माना। भारतीय ऋषि मुनियों ने जिस प्रकार कहा ''भद्रम पश्यन्ति ऋषयः'', ऋषि वह है, जो लोक कल्याण को देखता है और लोक कल्याण वह है जो किसी व्यक्ति समुदाय के लिए नहीं व्यक्ति विश्व के लिए जगत और सबसके कल्याण की कामना के लिए हो। पंडित दीनदयाल जी ने विचारधारा को समग्र चिन्तन के रूप में देखा और जिस विचारधारा को मानव के सामने रखा वह चिन्तन केवल आर्थिक चिन्तन नहीं बल्कि सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक तथा सब प्रकार के उन्नयन् का राह हमें दिखाता है, वह एक दूसरे का पूरक चिन्तन है।

पंडित दीनदयाल का जन्म 25 सितम्बर 1916 को नगला चन्द्रभान मथुरा जिले में हुआ था। इनके पिता का नाम भगवती प्रसाद उपाध्याय था तथा माता का नाम रामप्यारी था जो धार्मिक वृत्ति की महिला थी। रेल की नौकरी होने के कारण उनके पिता का अधिक समय बाहर ही बीतता था कभी–कभी छुट्टी मिलने पर ही आते थे। थोड़े समय

बाद ही दीनदयाल के भाई ने जन्म लिया जिसका नाम शिवदयाल रखा गया। पिता भगवती प्रसाद ने बच्चों को ननिहाल भेज दिया। उस समय उनके नाना चुन्नी लाल शुक्ल, घनकिया में स्टेशन मास्टर थे। मामा का परिवार बहुत बड़ा था, दीनदयाल अपने ममेरे भाइयों के साथ खाते–खेलते बड़े हुए।

उपाध्याय जी ने पिलानी, कानपुर आगरा तथा प्रयाग ने शिक्षा प्राप्त की। बी.ए. करने के बाद उन्होंने सरकारी नौकरी नहीं की। छात्र जीवन से वह राष्ट्रीय स्वयं सेवक के सक्रिय कार्यकर्ता हो गये। थे अतः कालेज छोड़ने के बाद तुरन्त बाद वे उक्त संस्था के प्रचारक बन गये और एकनिष्ठ भाव से संघ का संगठन कार्य करने लगे। उपाध्याय जी नितान्त सरल और सौम्य स्वभाव के व्यक्ति थे। सन् 1951 में अखिल भारतीय जनसंघ का निर्माण होने पर वे उसके संगठन मंत्री बनाये गये। उसके 02 वर्ष बाद उपाध्याय जी अखिल भारतीय जनसंघ के महामंत्री निर्वाचित हुए हैं और लगभग 15 वर्ष तक इस पद पर रहकर अपने दल की अमूल्य सेवा की। कालीकट अधिवेशन (दिसम्बर 1967) में वे अखिल भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। 11 फरवरी 1968 की रात में रेलयात्रा के दौरान मुगलसराय के आसपास उनकी हत्या कर दी गयी।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय के मानवतावाद की प्रमुख विशेषता उनका एकात्मावाद सम्बन्धी विचार है। यद्यपि उन्होने मानव जीवन को सुखमय बनाने के लिये उपर्युक्त सामाजिक आर्थिक व्यवस्था की उपयोगिता को स्वीकार किया है फिर भी उनका यह सुनिश्चित मत था कि मानवीय चेतना का निर्माण और विकास किया जाना अतीव आवश्यक है। इसका कारण यह है कि इसके अभाव में अच्छी से अच्छी सामाजिक आर्थिक व्यवस्था भी मनोवांछित परिणाम नही दे सकती। मार्क्स के अनुसार जीवन का निर्धारण चेतना द्वारा नहीं होता मनुष्यों की सामाजिक चेतना उनके जीवन का निर्धारण करती है। अतः मार्क्स के अनुसार यह कहा जा सकता है कि मनुष्य की चेतना उन्हें उनके अस्तित्व का ज्ञान नहीं कराती बल्कि इसके विपरीत उनका सामाजिक अस्तित्व उनकी चेतना को सुनिश्चित करती है। दूसरी ओर दीनदयाल उपाध्याय का विश्वास था कि जीवन या सामाजिक अस्तित्व और चेतना एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं फिर भी उनमें निर्णायक तत्व चेतना का ही होता है। एकात्मक सम्बन्धीं उनकी यह धारणा और उसके फलस्वरूप चेतना के विकास पर पंडित उपाध्याय द्वारा दिया गया बल उनके दृष्टिकोण को मार्क्स के विश्लेषण से पूरी तरह अलग कर देती है।

राष्ट्रीय जीवन का उदात्त स्वर हमें मानव जीवन के उस परंपरागत भारतीय जीवन मूल्यों का पुनः स्मरण कराता है जो प्रचलित आधुनिक पश्चिमी जीवन मूल्यों से कहीं अधिक भिन्न और श्रेष्ठ है। भारत के ये परम्परागत जीवन मूल्य व्यक्ति की अन्तरात्मा को झकझोर कर उसके यह विश्वास दिलाने में सक्षम है कि भौतिक और अभौतिक या आध्यात्मिक तत्व एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसलिए अकेले भौतिक पहलू पर आवश्यकता से अधिक बल दिये जाने से व्यक्ति के व्यक्तिगत और सामाजिक दोनो तरह के जीवन में असंतुलन पैदा हो जाएगा।

सामान्यतः आर्थिक सामाजिक न्याय के बल चेतना सम्बन्धी शक्ति के उच्च स्तर द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। भौतिकवादी पश्चिमी संसार में स्वतंत्रता शीघ्र ही स्वेच्छा चारिता और अनुशासन कठोर एकरूपता में परिवर्तन हो जाते हैं। ऊपर से दिखाई देने वाले विविध आयामों में आधारभूत आंगिक एकता का अहसास पश्चिमी जगत आज तक इसलिए नहीं कर सका क्यों कि इसने एकरूपता को ही एकता मानने की जर्बदस्त भूल की है। वह भारतीय सामाजिक आर्थिक व्यवस्था के गुणों का कभी भी सही आंकलन इसलिए नहीं कर सका है, क्योंकि उसने हमारे यहाँ विद्यमान स्थायित्व को निष्क्रियता या गतिहीनता और प्रगति की विरोध मान लिया है और अपनी दुस्साहसिकता को उसने गतिशीलता घोषित कर रखा है।

कोई भी पश्चिमी विचारक चाहे वह पूंजीवादी हो साम्यवादी एसे एकात्मवादी शासन की कल्पना नहीं कर सकता जिसमें प्रशासनिक सत्ता का अधिक विकेन्द्रीकरण हो इसका कारण यह है कि उनकी समझ में ही यह बात नहीं आती कि किसी एक राज्यसभा के हाथ में समस्त शक्तियां केन्द्रभूत न करते हुए भी केन्द्र और राज्य सरकारों की सत्ताए कायम की जा सकती है और उसमें क्षेत्रीय आद्योगिक तथा नागरिक स्वयत्तशासी सरकारें हो सकती है। पर भारतीय सामाजिक व्यवस्था का यही मूलाधार है और यही उसकी सर्व प्रमुख विशेषता है। पश्चमी समाज ने आज तक राष्ट्रीय स्वावलम्बन को अर्न्तराष्ट्रीय साम्राज्यवाद और अन्तराष्ट्रीय की उड़ान अपने राष्ट्र के प्रति निष्ठा के अभाव या द्रोह में परिवर्तित हो जाता है। भारत के 'एकात्मक मानवता' ने पश्चिमी विचार दर्शन सम्बन्धी व्यवस्थाओं की अपूर्णता एकांगी असन्तुलन और व्यर्थता को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया है। एकात्मवादी इस व्यवस्था ने हमें ऐसे विश्व राज्य के उदय की संभावना से अवगत करा दिया है जिसमें सभी देशों की राष्ट्रीय संस्कृतियां अपना–अपना विकास करते हुए मानवता को समृद्ध बनाने में सहायक हो सकेगी और तब ऐसे मानव धर्म का विकास किया जा सकेगा, जिसमें भौतिकता सहित सभी पंथ पूर्णता के साथ योगदान कर सकेंगे।

गांधी जी के विचार भी मानवीय 'एकात्म मानववाद' के समर्थन में प्रतीत होते हैं। उन्होंने रोटी के लिए श्रम सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। जीवन में रोटी मनुष्य की अनिवार्यतम आवश्यकता है और वह कठिन परिश्रम से प्राप्त होती है। अतः जो व्यक्ति बिना उपयुक्त श्रम के भोजन करता है वह चोर है। जो व्यक्ति आधुनिक सभ्यता के आवरण में अपनी आवश्ययताऐं बढ़ाते जाते है और स्वयं शारीरिक श्रम नहीं करते वे गरीबों के शोषक हैं। यदि प्रत्येक मनुष्य निजी परिश्रम से खाने की वस्तु का उत्पादन करे तो समाज में आर्थिक समानता की नींव पड़ेगी यदि प्रत्येक व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकते हों तो उन्हें अन्य ऐसे कार्य करने चाहिए जिसमें उनका शारीरिक श्रम लगता हो है जैसे कताई बुनाई या अन्य हस्तकलाऐं गांधी जी इसे प्राकृतिक नियम मानते थे। इसका अभिप्राय यह था कि कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी जरूरत पूरी करने के लिए श्रम करें।

मनुष्य को दो प्रकार की क्षुधा सताती है, शारीरिक और मानसिक। जिस प्रकार मानसिक क्षुधा के लिए लौकिक कार्य किये जाते है, शारीरिक क्षुधा भोजन है,

शारीरिक आवश्यकता शरीर द्वारा ही पूरी करनी चाहिए। बौद्विक श्रम द्वारा प्राप्त वेतन बुद्धि के लिए सन्तोष दायक हो सकता है लेकिन शारीरिक क्षुधा नहीं मिटा सकता। अतः बौद्धिक श्रम करने वालों को भी शारीरिक श्रम करना चाहिए उसके द्वारा ही वह ऐच्छिक होना चाहिए अनिवार्य नहीं। इसकी अनिवार्यता उन्हें निर्धनता रूग्णता और असन्तुष्ट बनाये रखेगी। गांधी जी श्रम को बहुत महत्व देते थे उनका विचार था कि शारीरिक श्रम करने वाला मेहनती ईमानदार तथा चरित्रवान होता है।

एकात्म मानववाद एक ऐसी धारणा है जो सर्पिलाकार मण्डलाकृति द्वारा स्पष्ट की जा सकती है। जिसके केन्द्र में व्यक्ति, व्यक्ति से जुड़ा हुआ एक घेरा परिवार, परिवार से जुड़ा हुआ एक घेरा – समाज, जाति, फिर राष्ट्र विश्व और फिर अन्त में ब्रह्माण्ड को अपने में समाविष्ट किये है इस अखण्डमण्डलाकार आकृति में एक घटक में से दूसरे फिर दूसरे से तीसरे का विकास होता है। सभी एक दूसरे से के पूरक एंव स्वाभाविक सहयोगी है। इनमें कोई संघर्ष नहीं है।

अन्त्योदय का अर्थ– आर्थिक रूप से कमजोर और पिछड़े वर्गों का उदय या विकास करने की क्रिया या भाव है पं दीनदयाल जी के मन में अन्दर अन्त्योदय की इच्छा चल रही थी। उनका विचार था कि कतार के अन्तिम व्यक्ति की समग्र जरूरतों को ध्यान में रखते हुए शासन की नीतियाँ और योजना बनाना चाहिए जिससे उस अन्तिम छोर तक सुनिश्चित किया जाए तब जाकर सही मायने में अन्त्योदय की अवधारणा को व्यवहारिक जामा पहनाया जा सकता है। इसकी अन्त्योदय की एक कसौटी थी कि अन्तिम पंक्ति में खड़े अन्तिम व्यक्ति तक विकास का लाभ पहुँचाना।

अन्त्योदय के विकास के लिए केन्द्र सरकार ने कई योजनाओं का क्रियान्वयन किया है। आम लोगों के जीवन स्तर में बदलाव एंव उनके जीवन सुरक्षा को लेकर मोदी सरकार के कार्यों की पड़ताल करने पर कुछ ऐसी योजनाएं है जो अन्त्योदय की कसौटी पर खरी उतरती है। दीन दयाल अन्त्योदय योजना का उद्देश्य कौशल विकास और अन्य उपायों के माध्यम से आजीविका के अवसरों में वृद्धि कर शहरी और ग्रामीण गरीबी को कम करना है।

निष्कर्ष–

इस प्रकार कहा जा सकता है कि एकात्म मानव दर्शन पर बहुत अधिक बल दिया है। व्यक्ति की महत्व को स्वीकार किया तथा विकास का लाभ अन्तिम व्यक्ति को मिल सके।।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल जे0 सी0:1972 "विद्यालय प्रशासन" , आर्य बुक डिपो, करौलबाग, नई दिल्ली–51

2. भिषीकर, चन्द्रशेखर परमानन्दः1991, द्वितीय संस्करण, "पं0 दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन" खण्ड–5 (राष्ट्र की अवधारणा), सुरुचि प्रकाशन, झण्डेवालान, नईदिल्ली–110055
3. देवधर, विश्वनाथ नारायणः1987, प्रथम संस्करण ,"पं0 दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन", खण्ड–7
4. (व्यक्ति दर्शन), सुरुचि प्रकाशन, झण्डेवालान, नईदिल्ली–110055
5. गुप्त, तनसुखरामः2005, प्रथम संस्करण,"पं0 दीनदयाल उपाध्याय महाप्रस्थान", सूर्य भारती प्रकाशन,नई दिल्ली–110006
6. गर्ग, पंकज कुमारः2003, (सित0–अक्टू0),अंक–55,"दयाल पत्रिका",पं0 दीनदयाल उपाध्याय संस्थान
7. (रजि0), मेरठ–250001
8. गर्ग ,पंकज कुमारः2005, (सित0–अक्टू0),अंक–66,,"दयाल पत्रिका",पं0 दीनदयाल उपाध्याय संस्थान (रजि0), मेरठ–250001
9. गर्ग, पंकज कुमारः2005, (नव0–दिस0),अंक–67,,"दयाल पत्रिका",पं0 दीनदयाल उपाध्याय संस्थान (रजि0), मेरठ–250001
10. गर्ग, पंकज कुमारः2006, (जन0–फर0),अंक–68,"दयाल पत्रिका",पं0 दीनदयाल उपाध्याय संस्थान (रजि0), मेरठ–250001
11. गर्ग, पंकज कुमारः2006 ,(मार्च–अप्रैल0),अंक–69,"दयाल पत्रिका",पं0 दीनदयाल उपाध्याय संस्थान (रजि0), मेरठ–250001
12. जैन किशल चन्द्रः1976 "शैक्षिक संगठन प्रशासन एवं पर्यवेक्षण," राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ एकेडमी जयपुर
13. जोगेन्द्र भाई जीतः1977 "शैक्षिक एव ंविद्यालय प्रशासन", विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–282002
14. जोग, बलवन्त नारायणः1991, "पं0 दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन",खण्ड–6, सुरुचि प्रकाशन, झण्डेवालान, नईदिल्ली–110055
15. कुलकर्णी, शरद अनन्तः1991, द्वितीय संस्करण ,"पं0 दीनदयाल उपाध्याय विचार दर्शन", खण्ड–4, सुरुचि प्रकाशन, झण्डेवालान, नईदिल्ली–110055
16. कपिल एच0के0ः2007, तेरहवां संस्करण, "अनुसंधान विधियाँ",एच0पी0भार्गव बुक हाउस, कचहरी घाट, आगरा–282005